सूरदास का वात्सल्य-वर्णन

Reena Saroha*

M.A. Hindi, UGC NET (Hindi) Research Scholar, Department of Hindi, NIILM University, Kaithal, Gaon & Post-Ranthdhana, District-Sonapat, Haryana

सार – सूरदास जी वात्सल्यरस के सम्राट माने गए हैं। उन्होंने श्रृंगार और शान्त रसों का भी बड़ा मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। बालकृष्ण की लीलाओं को उन्होंने अन्तःचक्षुओं से इतने सुन्दर, मोहक, यथार्थ एवं व्यापक रूप में देखा था, जितना कोई आँख वाला भी नहीं देख सकता। वात्सल्य का वर्णन करते हुए वे इतने अधिक भाव-विभोर हो उठते हैं कि संसार का कोई आकर्षण फिर उनके लिए शेष नहीं रह जाता।

-----X-----

हिन्दी के किसी कवि ने ठीक ही कहा है-

सूर-सूर तुलसी शशि, उडगन केशवदास।

अब के कवि खद्योत सम, जहाँ तहाँ करत प्रकाश।।

वस्तुतः सूरदास हिन्दी साहित्याकाश के सूर्य हैं जो सम्पूर्ण हिन्दी जगत् को आलोकित करता है। महाकवि सूरदास हिन्दी साहित्य के शिरोमणि हैं। उनका नाम मध्यकालीन युग से आज तक स्वर्ण अक्षरों में अमृतवाहिनी गंगा में प्रवाहित होता चला आ रहा है और आने वाले युगों में भी जब तक सूर्य, चंद्र, आकाश, पृथ्वी रहेंगे तब तक सूरदास इस मृत्यु लोक में अमर रहेंगे। महाकवि सूरदास की रचनाओं में पाँच नाम मिलते हैं- सूर, सूरदास, सूरजदास, सूरज और सूर श्याम। डॉ. मुंशीराम शर्मा ने उक्त पाँच नामों में सूरदास का ही माना है।[1] सूरदास के उक्त नामों में उनकी रचनाओं में 'सूर' और 'सूरदास'- इन दो नामों की सर्वाधिक आवृत्ति हुई है। सूरदास की जन्म-तिथि का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। पुष्टि सम्प्रदाय की मान्यता के अनुसार सूरदास जी श्री वल्लभाचार्य जी से आयु में दस दिन छोटे थे। आचार्य जी का जन्म संवत् 1535 की बैशाख कृष्णा दस उपरांत ग्यारह रविवार निश्चित है। इसलिए सूरदास की जन्मतिथि संवत् 1535 की शुक्ल पक्ष वार मंगलवार को हुई। हिन्दी के अधिकांश विद्वानों ने सूरदास का जन्म प्रायः संवत् 1540 माना है और सभी इतिहासकारों ने इसी को दोहराया है।[2] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी सूरदास का जन्म-काल संवत् 1540 स्वीकार किया है।[3] मिश्रबंधुओं ने भी इसे ही स्वीकार किया है।

सूरदास की जन्मभूमि के सम्बन्ध में अनेक मत प्रचलित हैं। सूरदास की जन्मभूमि के सम्बन्ध में निम्नलिखित स्थानों की चर्चा हुई है- गोपाचल (ग्वालियर), मथुरा प्रांत का कोई ग्राम, रुनकता (आगरा), सीही (वल्लभगढ़), सीही (आगरा) पारसौली आदि। 'चैरासी वैष्णवन की वार्ता' श्री हरिराय कृत 'भाव प्रकाश' में सूरदास का जन्म स्थान दिल्ली के पास 'सीही' नामक ग्राम को स्वीकार किया गया है।[4] यहाँ पुष्टिमार्गीय हरिराय जी के मत को प्रस्तुत करना उचित होगा। यथा- "दिल्ली के पास चार कोस उरे में एक सीही ग्राम है, जहाँ परीक्षित के बेटा जन्मेजय ने सर्प-यज्ञ किया था। दीनदयालु गुप्त, सत्येन्द्र, द्वारकादास पारीख और प्रभुदयाल मित्तल, हरवंशलाल शर्मा प्रभृति विद्वानों ने 'सीही' ग्राम को ही जन्म-स्थान स्वीकार किया है। यह ग्राम वल्लभगढ़ (हरियाणा) के अन्तर्गत आता है।"

सूरदास के अंधत्व के विषय में अनेक मत प्रचलित हैं। हरिराय ने 'भाव-प्रकाश' में सूर की जन्मांधता का स्पष्टीकरण इस प्रकार किया है - "सो सूरदास को जन्म ही सों नेत्र नहीं हैं।"[6]

प्राणनाथ ने भी सूर की जन्मांधता स्वीकार किया है-

बाहर नैन-विहीन सो, भीतर नैन विलास।

जिन्हें न जग कुछ देखियो, लखि हरि रूप निहाल।।7

वस्तुतः सूरदास जन्मांध थे।

सूरदास के गोलोकवास के सम्बन्ध में भी विद्वान् एकमत नहीं हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सूरदास का देहावसान संवत् 1620 माना है। रामकुमार वर्मा सूर का देहावसान संवत् 1642 माना है। प्रभुदयाल मित्तल व दीनदयाल गुप्त दोनों विद्वान् सूर का निधनकाल संवत् 1640 मानते हैं। सूरदास के तीन प्रमुख ग्रन्थ हैं- सूरसागर, सूर सारावली, साहित्य लहरी।

‘वात्सल्य’ से तात्पर्य

‘वृहत् हिन्दी कोश’ के अनुसार, ‘वात्सल्य’ के कई अर्थ हैं, जैसे ‘प्रेम, स्नेह, संतान के प्रति माता-पिता का स्नेह, एक भाव। कुछ आचार्य ‘वात्सल्य रस’ को दसवाँ रस मानते हैं।[8]

‘हिन्दी साहित्यकोश (भाग-एक)’ के अनुसार, “वात्सल्य शब्द ‘वत्स’ से व्युत्पन्न और पुत्रादिविषयक रति का पर्याय है। प्राचीन आचार्यों ने ‘वात्सल्य रस’ न लिखकर ‘वत्सल रस’ लिखा है और वात्सल्य को इसका स्थायी भाव माना है।[7]

आचार्य विश्वनाथ ने वात्सल्य का लक्षण देते हुए कहा है- “स्फुटं चमत्कारितया वत्सलं च रसं विदुरु। स्थायी वत्सलास्नेहः पुत्रालम्बनं मतम्।” अर्थात् प्रकट चमत्कार होने के कारण वत्सल को भी रस माना है। वात्सल्य स्नेह इसका स्थायी भाव होता है तथा पुत्रादि आलम्बन। बाल-सुलभ चेष्टाओं के साथ-साथ उसकी विद्या, शौर्य, दया आदि विशेषताएँ उद्दीपन हैं। आलिंगन, अंग स्पर्श, शिर का चूमना, देखना, रोमांच, आनंदाश्रु आदि अनुभाव हैं। अनिष्ट की आशंका, हर्ष, गर्व आदि संचारी भाव माने जाते हैं।[10]

आचार्य भोजराज के अनुसार, रसराज सिद्ध करने के प्रसंग में अन्य रसों की गणना करते हुए उनकी संख्या ‘वत्सल रस’ को मिलाकर दस मानी जा सकती है।[11] इससे ज्ञात होता है कि उनके समय तक नौ रसों के समकक्ष वत्सल को भी मान्यता प्राप्त हो चुकी थी। अभिनव गुप्त के मतानुसार वात्सल्य भाव मात्र है और उसकी रस रूप में स्वतंत्र सत्ता नहीं मानी जानी चाहिए।[12] आचार्य मम्मट के अनुसार- “जिस रस का स्थायी भाव स्नेह हो उसकी प्रेयांस कहते हैं और इसी का नाम वात्सल्य है।”[13]

सूरदास द्वारा इस वात्सल्य भाव का इतना विस्तार दिया गया है कि ‘सूरसागर’ को दृष्टि में रखते हुए वात्सल्य को रस न मानना विडम्बना-सा प्रतीत होता है। ‘हरिऔध’ ने मूलतः इसी आधार पर वात्सल्य को रस सिद्ध किया है। कृष्ण लीला के अन्तर्गत सूर का वात्सल्य वर्णन रसत्व प्राप्ति के लिए अपेक्षित सभी अंगोपांगों को अपने में समाविष्ट किये हैं। ‘सूरसागर’ में नंद यशोदा तथा अन्य वयस्क गोपियों का बाल कृष्ण के प्रति

प्रेम, आकर्षण, खीझ, व्यंग्य, उपालंभ आदि सब कुछ वात्सल्य रस की ही सामग्री है। कृष्ण का सौन्दर्य वर्णन तथा बाल-क्रीड़ाओं का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण भी इसी के अन्तर्गत आता है। शृंगार रस की तरह वात्सल्य के भी संयोग और वियोग के आधार पर दो भेद किये हैं।

यदि गंभीरता से देखा जाए तो जीवन का मूलाधार प्रेम है। यह प्रेम संसार में पशु, पक्षी, मानव आदि सभी प्राणियों में पाया जाता है और इसके विभिन्न रूप दृष्टिगोचर होते हैं। कहीं यह समवयस्कों में मैत्री या सखा भाव के रूप में दिखाई देता है तो कहीं पति और पत्नी के मध्य दाम्पत्य-भाव के रूप में दिखाई देता है। इसी तरह वात्सल्य भाव प्रेम का एक वह प्रकार है, जिसमें किसी छोटे व्यक्ति के प्रति निश्छल एवं निष्कपट प्रेम की भावना रहती है। वात्सल्य ही प्रेम की अत्यंत निर्मल एवं पवित्र दशा है। इसमें सहज, सुकुमार बालक की सामाजिक चेष्टाओं, कौतुक क्रीड़ाओं एवं अटपटे कार्यों का प्राधान्य रहता है। परिजन एवं पुरजन बालक की चेष्टाओं, क्रीड़ाओं, कौतुकों को देख-देखकर आनंद विभोर हो जाते हैं और अपने आपको भूल जाते हैं।

महाकवि सूरदास ने वात्सल्य भाव का वर्णन अत्यंत माझ्मकता एवं गंभीरता से किया है। उनके इस वर्णन में कवि की गहन अनुभूति दिखाई देती है। पाश्चात्य क्रॉचे के अनुसार ‘अनुभूति ही अभिव्यक्ति है और अभिव्यक्ति ही काव्य है।’ हिन्दी विद्वानों के अनुसार सूर का वात्सल्य-वर्णन हिन्दी-साहित्य के क्षेत्र में सर्वथा अनुपम एवं अद्वितीय है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के मतानुसार- “सूरदास बाल-हृदय का कोना-कोना झांक आए हैं।” उन्होंने अपनी बंद आँखों से जो वात्सल्य वर्णन किया है। वह अद्वितीय है। आगे आने वाले कवियों की शृंगार और वात्सल्य की उक्तियाँ सूर की जूठन-सी जान पड़ती हैं।[14] डॉ. रामकुमार वर्मा ने बाल-कृष्ण के शैशव में, श्रीकृष्ण के मचलने में, माँ यशोदा के दुलार में हम विश्वव्यापी माता-पुत्र का प्रेम देख सकते हैं।[15] आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है- “यशोदा के बहाने सूरदास ने मातृ-हृदय का ऐसा स्वाभाविक, सरल और हृदयग्राही चित्र खींचा है कि आश्चर्य होता है।”[16] डॉ. हरवंश लाल शर्मा के अनुसार, “सूर का वात्सल्य भाव विश्व-साहित्य में अपना विशेष स्थान रखता है।”[17] डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना के अनुसार, “इसमें कोई संदेह नहीं कि सूर ने श्रीकृष्ण की बाल-सुलभ चेष्टाओं, मनोहारिणी लीलाओं एवं रमणीय बाल क्रीड़ाओं का ऐसा हृदयग्राही एवं प्रभावशाली वर्णन किया है, जिसे पढकर एवं सुनकर हृदय हठात् उस ओर आकृष्ट हो जाता है।”[18] वे आगे लिखते हैं- “वास्तव में बाल-सुलभ

चेष्टाओं के मनोमुग्धकारी चित्रों का जितना बड़ा भंडार सूर-सागर में विद्यमान है, उतना अन्यत्र कहीं भी दिखाई नहीं देता। सूर के इन चित्रों में विविधता है। आकर्षण है, रमणीयता है और स्वाभाविकता है, जिसके फलस्वरूप कोई भी अन्य कवि सूर के वात्सल्य-वर्णन की समानता नहीं कर सका है।”[19]

सूरदास का वात्सल्य-वर्णन अत्यंत विशद एवं गंभीर है। इसका सम्यक् अध्ययन करने के लिए इसे दो भागों में विभक्त किया जा सकता है- 1. वात्सल्य का संयोग पक्ष 2. वात्सल्य का वियोग पक्ष।

वात्सल्य का संयोग पक्ष

वास्तव में सूरदास बाल-मनोविज्ञान के इतने बड़े पारखी थे कि उनके बाल-वर्णन में बाल-स्वभाव की एक भी बात छूटने नहीं पाई है। उन्होंने कृष्ण की बाल-लीलाओं की जैसी मनोहर झाँकी प्रस्तुत की है, वैसी झाँकी विश्व-साहित्य की किसी भी भाषा में मिलनी संभव नहीं है। इसीलिए बाल-वर्णन के लिए विश्व में अद्वितीय कवि सिद्ध हुए हैं। चक्षुर्विहीन सूर ने बालक कृष्ण की जिन सूक्ष्मातिसूक्ष्म मनोवृत्तियों के दर्शन किए हैं तथा हूबहू उनके चित्र अपने पदों में अंकित किए हैं, वह एक कुशल चित्रकार के द्वारा भी संभव नहीं है। बालक कृष्ण की लीलाओं का उन्होंने ऐसा कलापूर्ण चित्रण किया है कि उसे पढ़कर सहृदय पाठक झूम उठता है। ‘सूरसागर’ में लगभग सात सौ पद इसी संदर्भ में रचे गये हैं। सूर ने बालकों की सहज मनोवृत्तियाँ के स्वाभाविक चित्र अंकित करते हुए वात्सल्य के संयोग पक्ष का बड़ा ही मार्मिक एवं मनोहारी वर्णन किया है, जो इस प्रकार है-

1. स्वभाविक वेशभूषा का वर्णन

सूरदास ने बालक कृष्ण की रूप माधुरी की दिव्य एवं अलौकिक चित्रों द्वारा बड़ी ही सजीवता के साथ अंकित किया है। बालक कृष्ण की वेशभूषा बड़ी सरस, स्वाभाविक एवं चित्ताकर्षक है। यथा-

हरिजू की बाल-छवि कहीं बरनि।

सकल सुख की सीव कोटि मनोज सोभा हरनि।

सोभा कहत नहीं आवै।

अंचवत अति आतुर लोचन-पुट मन न तृप्ति कौ पावै।।[20]

वास्तव में कृष्ण की बाल-छवि अनुपम एवं अद्वितीय है। ‘देख री देख आनंद-कंद’, ‘सखि री नदनंदन देखु’, ‘वरनो बाल-वेष

मुरारि’ आदि पदों में सूर ने कृष्ण के अलौकिक एवं अद्भुत रूप की रमणीय झाँकी अंकित की है।

2. बालोचित चेष्टाओं एवं क्रीड़ाओं का वर्णन

सूरदास ने श्रीकृष्ण की बाल-सुलभ चेष्टाओं एवं विविध क्रीड़ाओं के अत्यंत स्वाभाविक एवं मनोमुग्धकारी चित्र अंकित किये हैं, जिनमें कहीं कृष्ण घुटनों के बल आँगन में चल रहे हैं, वहीं मुख पर दधि लेपकर दौड़ रहे हैं, कहीं अपने प्रतिबिम्ब को मणि-खंभों में निहार रहे हैं, कहीं अपने पैर का अंगूठा चूस रहे हैं तो कहीं हँसते हुए किलकारी भर रहे हैं। बालक कृष्ण अपना हाथ माता को पकड़ाते हैं तथा डगमगाते हुए पैर आगे बढ़ाते हैं। यथा-

सिखवत चलन जसोदा मैया।

अरबराई कर पानि गहावत, डगमगाइ धरनी धरै पैया।।[21]

बालक कृष्ण मकखन खाते हुए तथा धूल में घुटनों के बल चलते हुए बड़े सुंदर दिखाई देते हैं-

सोभित कर नवनीत लिए।

घुटरुनि चलत रेनु-तन मंडित मुख दधि लेप किए।

चारु कपोल, लोल लोचन, गोरोचन, तिलक दिए।।[22]

सूर ने बाल-कृष्ण की बाल-सुलभ क्रीड़ाओं के अनेक चित्र अंकित किए हैं। पालने में शयन करते समय बालक कृष्ण की स्वाभाविक बाल-चेष्टाएँ द्रष्टव्य हैं-

कर पग गहि, अंगूठा मुख मेलत।

प्रभु पौढ़े पालने अकेले, हरषि हरषि अपने रंग खेलत।।[23]

बालक कृष्ण की किलकारी भरी हँसी एवं मणि-जटित आँगन में अपने प्रतिबिम्ब को पकड़ने के लिए दौड़ते समय का चित्र भी बड़ा ही हृदयग्राही बन पड़ा है-

किलकत कान्ह छुटुरुवनि धावत।

मनिमय कनक नंद के आँगन बिम्ब पकरिबे धावत।।[24]

3. बाल मनोभावों एवं अन्तः प्रकृति का चित्रण

सूर ने बाल-कृष्ण के हृदयस्थ मनोभावों, बुद्धि-चातुर्य, स्पर्धा, खीझ, अपराध करके उसे छिपाने तथा उसके बारे में कुशलता

के साथ सफाई देने की प्रवृत्ति आदि के बड़े मनोहारी चित्र अंकित किये हैं। बालक कृष्ण दूध पीने में आनाकानी करते हैं और माता यशोदा उसे फुसलाकर दूध पिलाने का प्रयत्न करती है। माता यशोदा उसे कहती है कि तुम दूध पी लो, बलराम की तरह तुम्हारी चोटी भी बढ़ जाएगी। दूध पीते हुए बाल-कृष्ण कहते हैं-

मैया कबहि बढ़ेगी चोटी।

किती बार मोहि दूध पिबत भई, यह अजहूँ है छोटी।।

तू जो कहति बल की बैनी ज्यों, हवै है लांबी मोटी।।

काँचो दूध पिवावत पचि-पचि देत न माखन रोटी।।[25]

दूसरा चित्र बाल-कृष्ण की बात-सलभ सफाई का है। कृष्ण ने मक्खन चुराकर खा लिया है और वे रंगे हाथों पकड़े भी गए हैं, क्योंकि उनके मुख पर मक्खन लगा हुआ है। माता यशोदा के डाँटने पर बालकृष्ण मधुर सफाई देते हुए कहते हैं-

मैया मैं नहिं माखन खायो।

ख्याल परै ये सखा सबै मिली मेरे मुख लपटायौ।।

देखि तू ही सींके पै भाजन ऊँचे धरि लटकायौ।।

तुही निरख नान्हे कर अपने में कैसे करि पायो।।[26]

सूर ने बाल-सुलभ खीझ का भी चित्रण किया है। बलराम ने कृष्ण को चिढ़ा दिया है कि तू नंद और यशोदा का पुत्र नहीं है, तुझे तो मोल खरीदा गया है, क्योंकि नंद-यशोदा तो गोरे हैं और तू काला है। इस बात पर कृष्ण के हृदय में खीझ उत्पन्न होती है, उसका चित्ताकर्षक वर्णन सूर ने इस प्रकार किया है-

मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायो।

मो सो कहत मोल को लीनो, तोहि जसुमति कब जायो।।

कहा कहीं एहि रिस के मारे, खेलन हों नहिं जातु।।

पुनि-पुनि कहत कौन है माता, को है तुम्हारे तातु।।

गोरे नंद जसोदा गोरी, तुम कत स्याम सरीर।।

चुटकी दै दै हँसते ग्वाल सब, सिखै देत बलवीर।।[27]

4. बालकों के संस्कार, उत्सवों एवं समारोहों का वर्णन

सूर ने बालकों से सम्बन्धित संस्कारों, उत्सवों एवं समारोहों का वर्णन करते हुए वात्सल्य भाव की अभिव्यक्ति की है। नकछेदन, नामकरण, वर्षगांठ आदि अवसरों पर माता-पिता के हृदय में जो सहज उत्साह एवं स्वाभाविक प्रेम उमड़ने लगता है। कृष्ण की वर्षगांठ के अवसर पर माता- यशोदा कितनी प्रसन्न होकर अपनी सखियों के साथ मंगलगान कराती हैं, आँगन में मोतियों का चैक पुरवाती है तथा अन्य तैयारी कराती हैं-

अरी मेरे लालन की आजु वरष गाँठ सबै,

साखिन कौं बुलाइ मंगल-गान करावौं।

चंदन आँगन लिपाई मुतियन चैके पुराई,

उमंग अंगनि आनंद सौं तूर बजाओ।।[28]

5. गो-दोहन तथा गोचारण का वर्णन

बालक कृष्ण का गो-दोहन के लिए मचलना, गौओं को दुहने, गोचारण के लिए वन में जाने की हठ करने, वन में माता द्वारा छाक भिजवाने आदि का वर्णन करके वात्सल्य भाव की सुंदर अभिव्यक्ति की है। गो-दोहन के लिए हठ करते हुए बालक-कृष्ण का वर्णन द्रष्टव्य है-

तनक तनक मोय दोहिनी दै दै री मैया।

तात दुहन सीखन कहयौ मोहि धोरी गैया।।

अटपटे आसन बैठिकै गोधन कर लीनो।

धार अनत ही देखि कै ब्रजपति हँस दीनो।।

घर घर तै आई सबै देखनु ब्रज नारी।

चितै चोरचित हरिलियो हँसी गोप-बिहारी।।[29]

जब बालक कृष्ण गो-चारण के लिए वन में जाने लगे हैं, तब उनके लिए 'छाक' की तैयारी करती हुई माता यशोदा का प्रेम कितना उमड़ने लगता है-

जोरति छाक प्रेम सौं भैया।

ग्वालनि बोलि लए अधजँवत उठि धाय छोड भैया।।

भूखे गए आजु दोड मैया आपहि बोलि मंगाई।

सब माखन साजो दधि मीठो मधु मेवा पकवान।।

‘सूर’ स्याम को छाक पठावति कहति ग्वाल सों जान।।[30]

जद्यपि मन समुझावत लोग।

वात्सल्य का वियोग-पक्ष

सूर ने शृंगार रस की भाँति वात्सल्य के वियोग पक्ष का भी अत्यंत हृदयद्रावक चित्रण किया है। यथा-

1. श्रीकृष्ण के मथुरा-गमन पर -

वियोग वात्सल्य की सबसे सुंदर झलक श्रीकृष्ण के मथुरा-गमन पर अंकित की गई है। श्रीकृष्ण के मथुरा जाने का समाचार पाते ही माता यशोदा के हृदय में वात्सल्य का स्रोत इस तरह उमड़ पड़ता है और माता का रोम-रोम यह पुकार उठता है-

है कोई ब्रज में हितु हमारो, चलत गोपालहि राखै।

कहा करे मेरे छगन मगन को, नृप मधुपुरी बुलायौ।

सुफलक सुत मेरे प्राण हनन को काल रूप होई आयौ।।[31]

2. मथुरा से नंद के अकेले लौटने पर -

सूर ने यशोदा के मातृ-हृदय की वात्सल्यमयी झाँकी तन्मयता के साथ अंकित की है, जिस समय नंद अकेले ही मथुरा से लौटते हैं और माता यशोदा उन्हें द्वार पर अकेला खड़ा देखकर क्षोभ के मारे आकुल हो उठती है। उस क्षण माता यशोदा का हृदय से वात्सल्य रस फूट पड़ता है। वे अपने प्रिय पुत्र के अभाव में एक सहज टीस, स्वाभाविक व्याकुलता तथा व्यथा से परिपूर्ण होकर अपने पति नंद को फटकार उठती है-

जसुदा कान्हा कान्ह के बूझै।

फूटि न गई तुम्हारी चारों कैसे मारग सूझै।।

छांडि स्नेह चले मथुरा, कत दौरिन चीर गहयौ।

फाटि न गई वज्र की छाती, कत यह सूल सहयौ।।[32]

3. श्रीकृष्ण के मथुरा में ही निवास करने पर

वियोग वात्सल्य की हृदयद्रावक झाँकी सूर ने उस समय अंकित की है, जिस समय श्रीकृष्ण अनेक बुलावा भेजने पर भी मथुरा से गोकुल नहीं आते और माता अपने पुत्र के योग्य रुचिकर वस्तुओं को नित्य अपने सामने रखी हुई देखती है। उस समय माता के हृदय में कितनी पीड़ा होती है, कितनी टीस उठती है और उसके उद्गारों में वियोग वात्सल्य उमड़ता दिखाई देता है-

सूल होत नवनीत देखि, मेरे मोहन के मुख जोग।।

माता-यशोदा रात-दिन पागल-सी रहती है। उसे ब्रज काटने को दौड़ता है। उसे नित्य प्रति अपने लड़ते लाल के खान-पान, रहन-सहन आदि की चिंता सताती है। यथा-

निसि बासर छतियाँ ले लाऊँ, बालक लीला गाऊँ।

वैसे भाग बहुरि कब हवै हैं, मोहन गोद खिलाऊँ।।[33]

अपनी वियोगपूर्ण वात्सल्य पीड़ा से व्याकुल होकर देवकी से कहती है-

संदेसाँ देवकी सों कहियौ।

हौं तो धाय तुम्हारे सुत की, दया करत ही रहियौ।

प्रात होत मेरे लाल लडैते, माखन रोटी भावै।

जोई जोई मांगत सोई सोई देती, क्रम क्रम करि कै हाते।

सूर पथिक सुनि मोहि रैन-दिन बढ़यो रहत उर सोच।।[34]

इस प्रकार वात्सल्य का बड़ा ही हृदयहारी वर्णन सूर ने किया है जिसमें बालोचित चेष्टाओं एवं क्रीड़ाओं के अतिरिक्त मातृ-हृदय की भावुकता की मनोरम अभिव्यक्ति हुई है। वस्तुतः सूरदास के उक्त वात्सल्य वर्णन में तन्मयता है, स्वाभाविकता है, मनोवैज्ञानिकता है, सहज आकर्षण है। वास्तव में सूरदास बाल-प्रकृति एवं बाल मनोवृत्तियों के कुशल चितरे हैं। यह निर्विवाद सत्य है कि सूरदास वात्सल्य के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं।

संदर्भ

1. मुंशीराम शर्मा, सूर सौरभ (द्वितीय भाग), पृ. 50
2. हरवंशलाल शर्मा, सूरदास, राधाकृष्ण मूल्यांकन माल, पृ. 15
3. रामचन्द्र शुक्ल, सूरदास, सं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ. 108
4. चैरासी वैष्णवन की वार्ता में, अष्टसखन की वार्ता, पृ. 2

5.	हरवंशलाल शर्मा, 'सूरदास-राधाकृष्ण मूल्यांकन माला', पृ. 14	28.	वही, पृ. 857
6.	हरिराय, भावप्रकाश, पृ. 70	29.	वही, पृ. 869
7.	हरवंशलाल शर्मा, सूरदास-राधा कृष्ण मूल्यांकन माला, पृ. 17	30.	वही, पृ. 867
8.	कालिका प्रसाद, 'वृहत् हिन्दी कोश', पृ. 1234	31.	वही, पृ. 896
9.	'हिन्दी साहित्य कोश' (भाग एक), पृ. 769	32.	वही, पृ. 898
10.	हिन्दी साहित्य कोश (भाग एक), पृ. 769	33.	वही, पृ. 894
11.	सूरसागर, पृ. 769	34.	वही, पृ. 3793
12.	वही, पृ. 769		
13.	वही, पृ. 769		
14.	रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी-साहित्य का इतिहास, पृ. 165		
15.	रामकुमार वर्मा, हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ. 537		
16.	हजारी प्रसाद द्विवेदी, सूर-साहित्य, पृ. 129		
17.	हरवंश लाल शर्मा, सूर और उनका साहित्य, पृ. 243		
18.	द्वारिका प्रसाद सक्सेना, हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि, पृ. 184		
19.	सूरसागर, पृ. 184		
20.	वही, पृ. 195		
21.	वही, पृ. 162		
22.	वही, पृ. 717		
23.	वही, पृ. 715		
24.	वही, पृ. 798		
25.	वही, पृ. 793		
26.	वही, पृ. 952		
27.	वही, पृ. 833		

Corresponding Author
Reena Saroha*

M.A. Hindi, UGC NET (Hindi) Research Scholar,
Department of Hindi, NIILM University, Kaithal,
Gaon & Post-Ranthdhana, District-Sonapat,
Haryana